इकाई 10 'प्रेमाश्रम' का औपन्यासिक शिल्प

इकाई की रूपरेखा

10.0 उद्देश्य

10.1 प्रस्तावना

10.2 'प्रेमाश्रम' की कथावस्तु एवं कथा संयोजन

10.3 'प्रेमाश्रम' में सामाजिक-सांस्कृतिक चित्रण

10.4 'प्रेमाश्रम' की पात्र - योजना

10.4.1 प्रमुख पुरुष पात्र

10.4.2 प्रमुख नारी पात्र

10.5 भाषिक - योजना

10.6 सारांश

10.7 अभ्यास प्रश्न

10.0 उद्देश्य

इस इकाई में हम 'प्रेमाश्रम' का एक उपन्यास के रूप में मूल्यांकन करेंगे। इस इकाई को पढ़ने के बाद आप :

- 'प्रेमाश्रम' की कथा तथा उसमें घटना संयोजन आदि का परिचय दे सकेंगे;
- 'प्रेमाश्रम' की पात्र-योजना एवं प्रमुख पात्रों की चरित्रिक विशेषताओं की चर्चा कर सकेंगे;
- 'प्रेमाश्रम' में विविध पात्रों एवं स्थितियों के अनुसार परिवर्तित प्रेमचंद की भाषा का विवेचन कर सकेंगे; और
- 'प्रेमाश्रम' के शिल्प की अन्य विशेषताओं का परिचय दे सकेंगे।

10.1 प्रस्तावना

जब हम किसी उपन्यास का अध्ययन करते हैं तब हमारे समक्ष एक नया परिवेश, कुछ नये चरित्र, कोई कहानी या कई कहानियाँ एक साथ चित्रित होती हैं। हम भी उस कथानक या कथावस्तु, परिवेश के अंग हो जाते है। उपन्यास को समग्रता में समझने और जानने के लिए उसकी कथा, अन्तर्वस्तु, चरित्र, परिवेश, भाषा आदि को जानना और समझना बहुत जरूरी हो जाता है। यही जरूरत एक उपन्यास के रूप में उस कृति का मूल्यांकन करने की क्षमता प्रदान करती है। इस इकाई में हम प्रेमाश्रम का 'एक उपन्यास के रूप में' मूल्यांकन करेंगे। प्रेमाश्रम का प्रकाशन सन् 1922 में हुआ। अंग्रेजों के आने से पहले गाँव आत्मनिर्भर थे। अंग्रेजों ने भारत की परम्परा से चली आ रही आर्थिक व्यवस्था को समाप्त करके नयी व्यवस्था लागू की। इस व्यवस्था के अंतर्गत किसानों से भूमि के सभी अधिकार छीन कर जमींदारों को दे दिए गए और जमींदार को भूमि का अधिपति बना दिया गया। उनसे एक लगान की एक निश्चित राशि तय कर दी गई। लगान वसूलने के लिए जमींदार किसानों का शोषण करने लगे, उन पर मनमाना अत्याचार करने लगे। इस व्यवस्था से राष्ट्रीयता को भी धक्का पहुँचा क्योंकि जमींदार वर्ग अंग्रेजी राज के समर्थक बन गए। उनकी चापलूसी करने लगे। उन्होंने प्रतिरोधों और विद्रोहों में अंग्रेजों का साथ दिया। सरकार ने भी किसानों की दशा में सुधार करने की अपेक्षा जमींदारों को ही अधिक समर्थन दिया और उनके अधिकारों में वृद्धि की। मद्रास और बम्बई की रेयतवाड़ी व्यवस्था में भी किसान द्वारा लगान

न चुकाने पर उसे बेदखल कर दिया जाता था। स्थायी बन्दोबस्त व्यवस्था के चलते कृषक समाज की दशा शोचनीय हो गयी। परिवार के लिए भोजन की व्यवस्था चाहे न हो लेकिन उसे लगान की निश्चित राशि तो चुकानी ही पड़ती थी। ऐसी विषम परिस्थितियों में कृषक की दशा बदतर होती गयी। प्रेमचंद ने इस समाज को करीब से देखा था। उन्होंने प्रेमाश्रम में इस कृषक समाज की इसी शोचनीय दशा के चित्रण का सार्थक प्रयास किया। यह उपन्यास हमें उस युग के किसानों के कष्टों से साक्षात्कार तो करवाता ही है साथ ही हमें 'प्रेमाश्रम' की स्थापना और मायाशंकर जैसे जमींदार के रूप में नवीन चेतना की लहर और किसानों की खुशहाली की ओर भी देखने को मजबूर करता है। पाठक की पूरी सहानुभूति उन किसानों से है जो मनोहर, कादिर, बलराज, आदि के रूप में यहाँ विद्यमान हैं।

10.2 'प्रेमाश्रम'की कथावस्तु एवं कथा संयोजन

'प्रेमाश्रम' उपन्यास का लेखन ऐसे दौर में हुआ जब जमींदारों और ताल्लुकेदारों ने अंग्रेजी राज का समर्थन और सहयोग पाकर किसानों का शोषण करने, बेगारी कराने तथा लगान वसूलने में कोई कसर नहीं छोड़ी थी। इन सबसे भारतीय कृषक वर्ग त्रस्त था। प्राकृतिक आपदाएँ, बाढ़, महामारी, अकाल आदि के रूप में उन पर कहर ढातीं और बाकी कसर जमींदार पूरा करते। लेकिन एक समय आया कि कृषक वर्ग में जमींदरों के अत्याचारों और शोषण से तंग आकर विद्रोह की ज्वाला भड़की। प्राकृतिक आपदाओं पर तो उनका कोई वश नहीं था लेकिन जमींदार वर्ग का प्रतिरोध तो वे कर ही सकते थे। 'प्रेमाश्रम' ऐसे ही कुछ विद्रोही किसानों की कहानी भी कहता है। प्रेमाश्रम में जमींदारों के दो वर्ग हैं - एक वर्ग नियम कानून में बंधा हुआ है और किसानों पर अत्याचार करने की अपेक्षा उन्हें साथ लेकर चलता है। दूसरा वर्ग अंग्रेजी राज की शह में किसानों का शोषण कर ऐश्वर्य सुख का भोग करना चाहता है। पूरे उपन्यास में दूसरे वर्ग के जमींदार, ज्ञानशंकर का आतंक है लेकिन उपन्यास के अंत में विजय जमीदारों के प्रथम वर्ग की ही होती है किसानों का विद्रोह अनेक कष्टों और व्यथाओं के बाद उन्हें सुख की भूमि प्रदान करता है। प्रेमचंद की कल्पना ऐसे ही कृषक संसार की थी जो अपनी भूमि के स्वामी स्वयं हों।

'प्रेमाश्रम' की कथा लखनपुर में जमींदार के आतंक से शुरू होती हुई लखनऊ, गोरखपुर पहुँचती है और फिर अंत में लखनपुर की खुशहाली की तरफ मुड़ती है। इस पूरी कथा के जिम्मेदार लखनपुर के जमींदार ज्ञानशंकर हैं, जिनकी 'आशाओं' का स्वर्ग लखनपुर है। उनकी आशाएँ बड़ी-बड़ी हैं। वे 'अपने परिवार को फिर समृद्धि और सम्मान में शिखर पर ले जाना चाहते थे।'' इसके लिए वे लखनपुर के किसानों का शोषण करने के वे सभी हथकंडे अपनाते हैं जो उन्हें 'प्रेमचंद के उपन्यास साहित्य में तमाम खल पात्रों का सिरमौर' सिद्ध करते हैं। लेकिन लखनपुर के किसानों में भी जागृति की चेतना जोर मार रही है जिसकी शुरुआत मनोहर और बलराज करते हैं। वे इन अत्याचारों को चुपचाप सहने वालों में से नहीं हैं। उपन्यास के प्रारम्भ से ही इस विद्रोह की चिनगारी हमें दिखाई देती है। बड़े सरकार की बरसी के लिए घी की आवश्यकता है। लखनपुर के जमींदार ज्ञानशंकर का हुक्म है कि असामियों को घी के रूपये दो। रूपये सेर का भाव दिया जाएगा जबकि बाजार का भाव दस छटाँक का है। मनोहर रूपये लेने और घी देने से इन्कार कर देता है। जमींदार का चपरासी उसे धमकाता है- 'जब जमींदार की जमीन जोतते हो तो उसके हुक्म से बाहर नहीं जा सकते।' मनोहर भी कम नहीं। गर्म होकर कहता है ''जमीन कोई खैरात जोतते हैं? इसका लगान भी देते हैं। एक किस्त भी बाकी पड़ जाए तो नालिस होती है।'' उसके इस विद्रोह में उसका पुत्र बलराज उससे एक कदम आगे है - 'कोई हमसे क्यों घी माँगे? किसी का दिया खाते है कि किसी के घर माँगने जाते हैं? अपना तो एक पैसा नहीं छोड़ते, तो हम क्यों धौंस सहें?' इस विद्रोह का नतीजा निकलता है, जमींदार द्वारा मनोहर पर इजाफा लगान का दावा करके। यहीं से उपन्यास में जमींदार और असामी के संघर्ष का प्रारम्भ होता है। यहाँ हमें सन् 1921 के अवध - किसान - आंदोलन का आभास भी मिलता है। इस आंदोलन की मुख्य मांगें भी वहीं थीं जिनका चित्रण जमींदार किसान संघर्ष में 'प्रेमाश्रम'में किया गया है। इनमें बेगार पर रोक, बेदखली पर रोक, गैरकानूनी टैक्स पर रोक मुख्य थीं।

उपन्यास में आगे चलकर लखनपुर के जमींदार की महत्वाकांक्षा उसे लखनऊ की ओर प्रेरित करती है, जो उसका ससुराल है। यहाँ भी वारिस न होने पर वह पूरी रियासत हथियाना

चाहता है। इसके लिए उसे कई प्रपंच करने पड़ते हैं। वह अपने श्वसुर रायसाहब के बड़प्पन की ओर आकृष्ट होता है, समालोचक बनता है, समाज में अपना मान और आदर करवाता है। धीरे-धीरे कथा ज्ञानशंकर को गोरखपुर की तरफ खींच ले जाती है। वह अपनी साली के प्रति प्रेमासक्त होता है। उसकी भी संपत्ति वह अपने पुत्र को दिलाना चाहता है। अनेक हथकंडों से वह उसकी रियासत का मैनेजर बनता है। "उसके सद्प्रयत्नों, कार्य कुशलता और महत्वाकांक्षा के फलस्वरूप आय में वृद्धि और व्यय में कमी होती है।" तीन वर्ष तक उसके कारण सारी रियासत में हाहाकर मचा रहता है। यहाँ सब ठीक चल रहा था कि अचानक लखनपुर में फौजदारी हो जाती है। लखनपुर वापस लौटकर अत्याचारी जमींदार दैविक विपत्ति से जर्जर असामियों के घरों में आग लगवाता है, उनके जीवन स्रोत रूपी तालाब का पानी बन्द करवा देता है, उनके चरावर को रोकने को हुक्म देता है। अब गाँववाले एक हो जाते हैं। मनोहर और बलराज तो विद्रोही थे ही, गाँववालों में भी एका हो जाता है। वे भी जमींदार के शोषण का विरोध करने पर उतारू हो जाते हैं। जो गाँववाले मनोहर और बलराज की 'जान के घातक' थे वे अब उनकी बोली में अपनी आवाज मिलाने को तत्पर हो गए। यही नहीं उपन्यास में आगे चलकर जब गौस खाँ की हत्या के आरोप में पुलिस द्वारा डाक्टर प्रियनाथ से गलत रिपोर्ट बनवाकर बहुत से गाँव वालों की हत्या को आरोप में फँसाया जाता है। जिस दिन फैसला सुनाया जाने वाला था उस दिन गाँव वाले विद्रोह कर देते हैं। यहाँ तक डॉक्टर साहब उन्हें धमकाते हैं। पर 'यह न समझे कि साधारणत: जो लोग आँख के इशारे से काँप उठते हैं, वे विद्रोह के समय गोलियों की भी परवाह नहीं करते।' उपन्यास में प्रेमचंद की इस टिप्पणी पर रामविलास शर्मा का कहना है - 'विद्रोह - किसके प्रति विद्रोह? स्पष्ट ही अंग्रेजी राज के प्रति विद्रोह। असहयोग आंदोलन से पहले यह विद्रोह-भावना जनता में विद्यमान थी। विद्रोह के समय गोलियों की परवाह न करना, यह भावना गांधीवाद की देन थी; वह जनता की सहज देशभक्ति का विकास थी।' यानी किसान आंदोलन अपनी पूरी फॉर्म में बढ़ रहा था और 'प्रेमाश्रम' में उसका यह रूप प्रेमचंद ने दिखाने का प्रयत्न किया है। यही नहीं गाँववालों का विद्रोह उस डॉक्टर का हृदय-परिवर्तन भी कर देता है और उसकी गवाही बंदी गाँववालों के अनुकूल होती है। अंतत: गाँव वाले हत्या के आरोप से बरी भी हो जाते है। यहीं प्रेमचंद का आदर्शवाद है।

उपन्यास में एक और कथा जमींदार 'प्रेमशंकर' की भी चलती है। उनका भाई ज्ञानशंकर आततायी जमींदार के रूप में किसानों के शोषण में कोई कसर नहीं छोड़ता, वहीं दूसरी ओर अमरीका से पढ़कर आए प्रेमशंकर किसानों की सहायता करने और उन्हें अपने अधिकारों के प्रति सचेत करते रहते हैं। वे 'प्रेमाश्रम'की स्थापना करते हैं जो प्रेमचंद के आदर्श के सर्वथा अनुकूल है। इस कथा के साथ ही राय साहब से संबंधित कथाएँ लखनऊ मसूरी और नैनीताल में चलती हैं। वे भी जमींदार वर्ग के है और अंग्रेज राज की नीति के कायल हैं। उपन्यास गोरखपुर की कथा गायत्री के माध्यम से कही गई है। वास्तव में "प्रेमाश्रम में एक से अधिक कथाएँ हैं। ज्ञानशंकर, प्रेमशंकर, कमलानंद और गायत्री जमींदार वर्ग के हैं। उपन्यास की एक कथा इनके जीवन और समस्याओं पर प्रकाश डालती है। मनोहर, बलराम, कादिर और अन्य पात्र दूसरे वर्ग के हैं। दूसरी कथा गरीबों की कठिनाइयों और परेशानियों का चित्रण करती है।' (हजारी प्रसाद द्विवेदी) देखा जाए तो प्रेमाश्रम में जमींदार और किसान के संघर्ष की कथा को ही प्राथमिकता दी गई है। जमींदारों के शोषण एवं किसानों के कष्टों एवं विपत्तियों का लेखा जोखा प्रस्तुत किया गया है, और अंतत: 'प्रेमाश्रम' की स्थापना का आदर्श प्रस्तुत किया गया है।

10. 'प्रेमाश्रम' में सामाजिक-सांस्कृतिक चित्रण

प्रेमाश्रम में जमींदार-कृषक संघर्ष कथा के अंतर्गत ही भारतीय संस्कृति के अनेक रूप भी हमें दिखाई देते हैं। संस्कृति के ये विविध पक्ष में कहीं रूढ़िवादी परंपराओं के रूप में चित्रित हैं तो कहीं तंत्र-मंत्र साधना के रूप में। प्रेमाश्रम के रईस जमींदार राय कमलानंद योग सिद्धि के द्वारा अपने यौवन को अक्षुण्ण बनाने की चाह रखते हैं। वे स्वयं कहते हैं - 'मैं अपने जीवन को चरम सीमा तक ले जाना चाहता था। इसके लिए मैंने कितना संयम किया, कितनी योगक्रियाएँ की, साधु-सन्तों की कितनी सेवा की, जड़ी-बूटियों की खोज में कहाँ-कहाँ मारा-मारा फिरा, तिब्बत और काशमीर की खाक छानता फिरा।.....मैंने अपनी सारी सम्पति कार्य-सिद्धि पर अर्पण कर दी थी। योग और तन्त्र का अभ्यास इसी हेतु से किया था

कि अक्षय यौवन तेज का आनन्द उठाता रहूँ।'' तंत्र-मंत्र में प्रभाशंकर के पुत्रों, तेज और पद्म का भी विश्वास है। वे ऐसी सिद्धि प्राप्त करना चाहते थे, जिसके सामने धन और ऐश्वर्य की कोई हस्ती न हो। वे मंत्र जगाते हैं और जब उसे सिद्ध कर प्रयोग में लाते हैं तो अन्त मृत्यु के सिवा और कुछ नहीं होता। अन्ततः प्रेमचंद ने तंत्र मंत्र सिद्धि के संबंध में तेजशंकर के मुख से कहलवाया है - ''जिस धूर्त पापी ने यह किताब लिखी है, उसे पाता तो इसी तलवार से उसकी गर्दन काट लेता। उसके भ्रम जाल में पड़कर मैंने अपना सर्वनाश किया।' और आगे प्रेमचंद कहते हैं - 'मिथ्या विश्वास ने दो लहलहाते जीव-पुष्पों को पैरों से मसल डाला।'' इस घटना के संबंध में डॉ. रामविलास शर्मा का कहना हैं - ''पाठक को लग सकता है, यह घटना अतिरंजित है, अपवादस्वरूप है। नरबलि के समाचार तो जब-तब अखबारों में छपते ही रहते हैं, **प्रेमाश्रम** की घटना का भयंकर पक्ष यह है कि मंत्र सिद्ध करने के दौरान एक युवक ने अपने ही भाई का बध किया।'

प्रेमशंकर के विदेश से लौटने पर भी उनके विदेश गमन और बहिष्कार का प्रकरण भी उस युग के समाज को प्रतिबिम्बित करता है। प्रेमचंद के विदेश गमन और प्रायश्चित के संबंध में विचार है- 'एक ज़माना था कि भारत के भिक्षुओं ने विदेश यात्रा करके अपने देश और धर्म का गौरव बढ़ाया था। फिर पाखंड का यह चक्र चला कि विदेश जाना पाप हो गया।.....आज भी यहाँ (भारत) के अध्यात्मवादी लोग विदेश जाना पाप समझते हैं और उसके प्रायश्चित स्वरूप गोबर खाते हैं, सिर मुंड़ाते हैं और भोज देते हैं।.....इसी पाखण्ड ने और इन्हीं पाखण्डियों ने भारत को चौपट किया और आज भी उनका वैसा ही पाखंड राज है।' स्पष्ट है कि' प्रेमचंद इस पाखण्ड की निन्दा करते हैं और इसे स्वीकार नहीं करते। प्रेमशंकर के माध्यम से उन्होंने अपने इस चिंतन की पुष्टि 'प्रेमाश्रम' में की है। प्रेमशंकर विदेश से लौटने के बाद प्रायश्चित नहीं करने का संकल्प लेते हैं। यद्यपि उनका भाई तथा पत्नी दोनों प्रायश्चित के समर्थक हैं क्योंकि वे बिरादरी के बाहर नहीं हैं लेकिन प्रेमशंकर ने इसका स्पष्ट विरोध किया है। वे कहते है - 'शिक्षा का यह फल होना चाहिए कि तुम बिरादरी के सूत्रधार बनो, उसको सुधारने का प्रयास करो, न यह कि उसके दबाव से अपने सिद्धान्तों को भी बलिदान कर दो।.....मैंने दर्शन शास्त्रों पर कितने ही व्याख्यान दिए, अपने रस्म-रिवाज और वर्णाश्रम धर्म का समर्थन करने में सदैव तत्पर रहा, और मेरा मन इसे कभी नहीं मान सकता कि यहाँ किसी को मुझे विधर्मी समझने का अधिकार है।'' यहाँ स्पष्ट है कि रस्म-रिवाज, वर्णाश्रम धर्म-पर्दा प्रथा आदि भी धर्म और समाज के अभिन्न अंग थे और उनको मानने के कारण प्रेमशंकर को स्वयं पर गर्व है। यहाँ उनका दोहरा व्यक्तित्व है। एक तरफ तो प्रायश्चित को नकार रहे हैं और दूसरी तरफ रस्म-रिवाजों को भी अपना रहे हैं।

'प्रेमाश्रम' में प्रेमचंद ने ग्रामीण समाज का अत्यंत स्वाभाविक चित्र हमारे समक्ष प्रस्तुत किया है, जहाँ मनोहर, बिसेसर, के साथ कादिर मियाँ भी भजन गाते हैं। यह सब ग्रामीण वातावरण में अत्यंत स्वाभाविक एवं सहज लगता है कहीं कोई बनावट नहीं लगती। उस समय के जो संस्कार और परंपराएँ ग्रामीण समाज में जीवित थीं उनका अंकन 'प्रेमाश्रम' में बड़ी कुशलता के साथ किया गया है।

10.4 'प्रेमाश्रम' की पात्र योजना

प्रेमाश्रम के पात्र जमींदार वर्ग के भी हैं और किसान वर्ग के भी, नौकरशाह भी हैं और अंग्रेजी शिक्षा के हिमायती भी। यहाँ जमींदार वर्ग के प्रतिनिधि के रूप में गायत्री, प्रेमशंकर, ज्ञानशंकर प्रभाशंकर और राय कमलानंद हैं। किसानों के प्रतिनिधि मनोहर, बलराज, कादिर और बिलासी आदि हैं। हाकिम वर्ग में ज्वालासिंह, दयाशंकर आदि आते है। ये पात्र अपने-अपने वर्ग का प्रतिनिधित्व करते हैं। 'प्रेमाश्रम' के सभी पात्र अपनी-अपनी समस्याओं से जूझते हैं और उनका समाधान भी निकालते हैं। कोई आत्महत्या की ओर अग्रसर होता है तो किसी का हृदय परिवर्तन हो जाता है और वह सन्मार्ग को अपनाता है। यही नहीं, कोई अपने अधिकार की लड़ाई में हत्या करने की ओर भी प्रेरित होता है। प्रेमचंद ने स्वयं कहा है कि 'मैं उपन्यास को मानव चरित्र का चित्र–मात्र समझता हूँ। मानव-चरित्र पर प्रकाश डालना और उसके रहस्यों को खोलना ही उपन्यास का मूल तत्व है।' इस उपन्यास में भी प्रेमचंद ज्ञानशंकर, राय कमलानंद, गायत्री, विद्या, मनोहर आदि के चरित्र के रहस्यों को परत-दर-परत खोलते गए हैं। उनके विचार, मानसिक स्थिति, उनके चरित्र के विविध पक्षों से हमें

परिचित कराते चले हैं। यहाँ हम 'प्रेमाश्रम' के चरित्रों को दो वर्गों में विभाजित करके उनकी विशेषताओं पर दृष्टि डालेंगे।

10.4.1 प्रमुख पुरुष पात्र

प्रेमाश्रम के प्रमुख पुरुष पात्रों में जमींदार, किसान, हाकिम, वकील, डॉक्टर आदि लगभग सभी वर्गों के प्रतिनिधि हैं। जैसा कि हम पहले उल्लेख कर चुके हैं कि प्रेमशंकर, ज्ञानशंकर, प्रभाशंकर और राय कमलानंद जमींदार का ज्वालासिंह तथा दयाशंकर अफसर वर्ग का, मनोहर, बलराज, कादिर, सुक्खू चौधरी, आदि कृषक वर्ग का प्रतिनिधित्व करते हैं।

प्रभाशंकर :- लाला प्रभाशंकर पुराने जमींदार हैं और प्रेमशंकर तथा ज्ञानशंकर उनके भतीजे हैं। लाला प्रभाशंकर उस जमींदार वर्ग का प्रतिनिधित्व करते हैं जो नियम कानून में बँधे है। वे सरल प्रकृति के मनुष्य है। किसानों के साथ उनका व्यवहार कठोर और अनियंत्रित नहीं है। मनोहर जब घी के रूपये लेने से इन्कार करता है और ज्ञानशंकर के दरबार में उसकी पेशी होती है तब बिगड़ी हुई बात को प्रभाशंकर अपने 'निर्द्वन्द्व स्वभाव' के अनुसार निपटाना चाहते हैं - "तुम लोग हमारे पुराने असामी हो, क्या नहीं जानते कि असामियों पर सख्ती करना हमारे यहाँ का दस्तूर नहीं है। ऐसा ही कोई काम आ पड़ता है तो तुमसे बेगार ली जाती है और तुम हमेशा उसे हँसी-खुशी देते रहते हो।" लाला प्रभाशंकर जहाँ एक ओर दयालु और सरल प्रकृति के जमींदार हैं वहीं पारिवारिक स्तर पर भी वे बड़े भाई के पुत्रों को अपनी संतान से भी अधिक प्रेम करने वाले व्यक्ति हैं। यहाँ तक कि स्वार्थान्ध होकर जब उनका भतीजा बँटवारे की इच्छा जाहिर करता है तब भी उनकी सरल प्रकृति उनसे यही कहलाती है - "घर तुम्हारा है, मैं भी तुम्हारा हूँ, जो टुकड़ा चाहो मुझे दे दे, मुझको आपत्ति न होगी।" उनकी यही सरलता बाद में उनके कष्टों का कारण बनती है। क्योंकि उनके संस्कार और मूल्य उनके पुत्रों को भी नहीं मिल पाते।

प्रभाशंकर अंग्रेजी राज के समर्थन से किसानों पर अत्याचार एवं शोषण का रास्ता नहीं अपनाते। उनका नाता किसानों के साथ सहानुभूति का है अत: असामियों द्वारा उनके विरुद्ध 'प्रेमाश्रम' में संघर्ष भी नहीं है। लेखक ने कहीं भी लगान लेने में सख्ती करने, बेगारी कराने या किसानों पर अत्याचार कर उनका शोषण करने में प्रभाशंकर को जिम्मेदार नहीं ठहराया है। जबकि वे भी उसी लखनपुर के जमींदार है जिसे उनका भतीजा बँटवारे में ले लेता है और किसानों का शोषण करने की और उन पर जमींदार के अत्याचार करने की सारी सीमाएँ लाँघ जाता है।

प्रेमशंकर : 'प्रेमाश्रम' में किसान और जमींदार का संघर्ष है। इस संघर्ष के फलस्वरूप 'प्रेमाश्रम' की स्थापना होती है, और इसका श्रेय प्रेमशंकर को है। प्रेमशंकर भी जमींदार वर्ग का ही प्रतिनिधित्व करते हैं। वे उपन्यास के खास पात्र और निर्दयी जमींदार ज्ञानशंकर के भाई हैं। प्रेमशंकर को किसानों से सहानुभूति है। वे किसानों के दु:ख दर्द में भागी बनते हैं और जमींदार के अत्याचार और शोषण से टूटे और त्रस्त किसानों की यथासंभव सहायता भी करते हैं - धन से, श्रम से। प्रेमाश्रम की स्थापना भी उन्होंने किसानों के हित के लिए ही की है।

प्रेमशंकर छ: साल बाद अमेरिका से लौटे हैं। अमेरिका में कृषि शास्त्र का अभ्यास किया और 'दो साल तक एक कृषिशाला में काम भी किया है।' वे अपना सब कार्य स्वयं करते है। विदेश होकर आए हैं तभी उन्हें पराधीनता का पूरा ज्ञान है। उनके विदेश भागने का कारण उनका स्वाधीनता प्रेम था। उनके स्वराज्य आंदोलन में अग्रसर होते ही पुलिस उन्हें फँसाना शुरू कर देती है। यह ज्ञात होते ही कि उन पर अभियोग की तैयारी हो रही है वे विदेश भाग जाते हैं। विदेश जाकर ही उन्हें अनुभव होता है कि "जिन विचारों के लिए मैं यहाँ राजद्रोही समझा जाता था उससे कहीं स्पष्ट बातें अमेरिका वाले अपने शासकों को नित्य सुनाया करते हैं, बल्कि वहाँ शासन की समालोचना जितनी ही निर्भीक हो, उतनी ही आदरणीय समझी जाती है।" लेकिन उनका यह स्पष्ट मानना है कि "यहाँ स्वदेश के देहातों और छोटे शहरों का जीवन उनसे कहीं सुखकर है मेरा विचार भी सरल जीवन व्यतीत करने का है। हाँ, यथासाध्य कृषि की उन्नति करना चाहता हूँ।" वे एक कृषि प्रयोगशाला स्थापित करना चाहते हैं। जिससे वे कृषि की उन्नति तथा सुधार कर सकें। इस कार्य के लिए वे पूरी तन्यमता से तत्पर होते हैं। वे कृषि-प्रयोगशाला की आवश्यकता की ओर उच्च वर्ग का ध्यान आकर्षित करने के लिए समाचार पत्रों में कई लेख छपवाते हैं। इसके फलस्वरूप लखनऊ

की ताल्लुकेदार एसोसियन उन्हें कृषि संबंधी निबंध - पढ़ने के लिए आमंत्रित भी करती है। लखनऊ पहुँचकर उनके स्वाभिमान को धक्का पहुँचता है। उन्हें लगता है कि 'रइसों के सामने हाथ फैलाकर उन्होंने अपने आत्माभिमान को चोट पहुँचाई।' और यहीं से वे अपना अलग रास्ता अपना लेते है। जो किसानों के दु:ख दर्द में बराबर की हिस्सेदारी का है। "किसी गाँव में हैजा फैलने की खबर मिलती कहीं कीड़े, ऊख के पौधे का सर्वनाश किये डालते थे, कही आपस में लठियाव होने का समाचार मिलता। प्रेमशंकर डाकियों की भाँति इन सभी स्थानों पर पहुँचते और यथासाध्य कष्ट-निवारण का प्रयास करते।" यानी प्रेमशंकर के रूप में प्रेमचंद ने एक ऐसे आदर्श जमींदार का अंकन किया जिसने स्वाधीनता संग्राम में भी अपना योगदान दिया। जिसने स्वाभिमान से जीना सीखा, जो किसानों का शोषण नहीं करता अपितु उनकी यथा संभव सहायता करता है। उन्हें उनके अधिकारों के प्रति सचेत करता है। यहाँ तक कि उन पर किसान सभा का आदमी होने का भी संदेह किया जाता है जो किसानों को भड़काते हैं।

प्रेमशंकर **परमार्थ** को सर्वोपरि मानते हैं। दूसरों के हित के लिए काम करने में उन्हें अपनी तनिक भी परवाह नहीं। बाढ़ आने पर प्रेमशंकर गाँव के निवासियों को बचाने का ऐसा उत्साह दिखाते हैं कि सारे गाँव वाले भी उनके साथ हो लेते हैं - "यह रक्षक - दल सारी रात पशुओं के उद्धार का कार्य करता रहा। उनका साहस अदम्य और उद्योग अविश्रान्त था।" लेकिन यह परोपकार उन्हें भारी पड़ता है। "प्रेमशंकर अपने झोंपड़े पर पहुँचे तब दो सौ से अधिक पशुओं को आनन्द से बंधे जुगाली करते हुए देखा। लेकिन इतनी कड़ी मेहनत कभी न की थी। ऐसे थक गए कि खड़ा होना मुश्किल था। अंग-अंग में पीड़ा हो रही थी। आठ बजते-बजते उन्हें ज्वर हो आया।" लेकिन इससे भी उनके उत्साह में कोई कमी न हुई। अशक्तता की स्थिति में भी वे बाढ़ के बाद गाँव वालों के कष्टों पर विचार करते हैं और बाँध बनाने का संकल्प लेते हैं। यूँ तो बांध बनाना उस गाँव के जमींदार का कार्य है। लेकिन वे गयाजी में बैठे रहते है और उनका मुन्शी समय पर आकर लगान वसूल कर जाता है। अत: प्रेमशंकर स्वयं बांध का कार्य हाथ में लेते हैं। श्रम और धन से गाँव की सहायता करते हैं। यही नहीं जब लखनपुर गाँव के किसानों को एक तरफ महामारी का शिकार बनना पड़ता है और दूसरी तरफ ज्ञानशंकर उन पर इजाफा लगान का दावा कर देता है, तब भी उसी गाँव के दूसरे जमींदार प्रेमशंकर उनकी सहायता करने को तत्पर होते हैं। मनोहर द्वारा गौस खाँ की हत्या किए जाने पर डॉ. प्रियनाथ की गवाही से लगभग सभी गाँववालों को मुकदमे में फँसा दिया जाता है। गाँव वाले डॉक्टर के दुश्मन हो जाते हैं। जब वे डॉक्टर साहब पर प्रहार करने को तत्पर होते हैं तो लाठी का प्रहार भी प्रेमशंकर स्वयं पर झेल लेते हैं और उनका यही परोपकार डाक्टर साहब का हृदय परिवर्तन कराता है। वे अपना बयान गाँव वालों के पक्ष में देते हैं और गाँववाले रिहा हो जाते हैं।

प्रेमशंकर की **सहिष्णुता** उन्हें अपने ही गाँव लखनपुर से अलग कर देती है और अंतत: भाई की चालाकी से वे उस गाँव से इस्तीफा भी दे देते हैं। लेकिन उनके चरित्र का यही गुण अंतत: उन्हें गायत्री, मायाशंकर, प्रभाशंकर, विद्या, श्रद्धा-सभी की दृष्टि में सम्माननीय बना देता है। यहाँ तक कि उनका स्वार्थान्ध भाई ज्ञानशंकर जो कुटिल, चालाक और अत्याचारी जमींदार है, का भी समय-समय पर क्षणिक हृदय-परिवर्तन प्रेमशंकर के सान्निध्य में जब-तब होता रहता है। प्रेमशंकर के रूप में प्रेमचंद ने ऐसे चरित्र का सृजन किया है जो केवल आदर्श की भूमि पर ही अवस्थित नहीं है। उसमें भी मानवीय दुर्बलताएँ हैं। वह एक गाल पर चाँटा खाकर दूसरा गाल आगे करने की नीति में विश्वास नहीं करता। उसकी भी सहिष्णुता कई बार जवाब दे जाती है। प्रेमशंकर और ज्ञानशंकर का मित्र डिप्टी ज्वालासिंह अपने कर्तव्य पालन में ज्ञानशंकर की अपील खारिज कर देता है और ज्ञानशंकर उनके चरित्र पर आरोप करते हुए लेख लिखता है। इस प्रकरण से ज्वाला सिंह टूट जाते है और प्रेमशंकर को कहते हैं कि "इन आक्षेपों से मुझे इतना दु:ख हुआ है कि उसे प्रकट नहीं कर सकता। कई बार इच्छा हुई कि विष खा लूँ।.....किन्तु यह सोचकर कि कदाचित् इससे इन आक्षेपों की पुष्टि हो जाएगी, रुक गया।" तब प्रेमशंकर बिना इस बात की परवाह किये कि उनके भाई ज्ञानशंकर पर इसका क्या प्रभाव पड़ेगा, ज्वालासिंह को सलाह देते हैं - "मैं स्वयं सहिष्णुता का भक्त हूँ। लेकिन यह असंभव है कि कोई मेरे चरित्र पर मिथ्या कलंक लगाए और मैं मौन धारण किये बैठा रहूँ। आप वकीलों से सलाह लेकर अवश्य मानहानि का मुकदमा चलाइए।"

प्रेमाश्रम में यूँ तो कोई नायक नहीं है लेकिन उपन्यास के दो प्रमुख पात्र प्रेमशंकर और ज्ञानशंकर एक दूसरे के मुकाबले खड़े हैं। ज्ञानशंकर उपन्यास का निगेटिव और खल पात्र है। वह भारत में ही रहकर अंग्रेजी पढ़ा है जबकि उसके बड़े भाई लेकिन प्रेमशंकर अमरीका से अंग्रेजी पढ़ कर आए हैं। प्रेमशंकर में वैसे तो नायकत्व के गुण दृष्टिगत होते हैं लेकिन ज्ञानशंकर के मुकाबले वे कमजोर ही सिद्ध हुए है। प्रेमशंकर जो कुछ भी करने के लिए उद्धत होते है उसमें वे खुलकर और पूरी लगन से जुट नहीं पाते। कृषि प्रयोगशाला बनाना चाहते हैं तो उसकी शुरुआत ही गलत तरीके से होती है। लखनपुर के किसानों की सहायता करना चाहते हैं तो भातृ-प्रेम आड़े आता है। यही नहीं जब चाचा प्रभाशंकर को भी धन की आवश्यकता पड़ती है तब भी वे असमंजस में रहते हैं कि मायाशंकर की पढ़ाई और यूरोप भ्रमण के लिए जो धन उनके पास बचा है उसे वे दें कि न दें। जबकि ज्ञानशंकर ने अपनी महत्वाकांक्षा के लिए छोटे से छोटा और बड़े से बड़ा झूठ बोला, हत्या की, प्रेम का नाटक किया, पुत्र को दाँव पर लगाया, भाई के साथ छल किया और अंत भी अपनी मर्जी से ही चुना। इस उपन्यास में ज्ञानशंकर एक विशिष्ट भूमिका में हैं। 'प्रेमाश्रम' जमींदार किसान संघर्ष का श्रेष्ठतम उपन्यास है और ज्ञानशंकर सबसे निकृष्टतम जमींदार। ज्ञानशंकर के चरित्र के विविध पहलुओं पर हम अगली इकाई में विस्तार से विचार करेंगे।

प्रेमशंकर के माध्यम से उपन्यास में कहीं-कहीं प्रेमचंद के विचार भी इंगित होते हैं। प्रेमचंद उस जमींदारी प्रथा के विरोधी हैं जो अंग्रेजी राज द्वारा स्थापित की गई है। इस प्रथा के कारण भूमि पर किसानों का स्वामित्व समाप्त हो गया और जमींदारों को कानूनी अधिकार दे दिए गए। जमींदार वर्ग भूमि को अपनी मर्जी से खरीद या बेच सकता था। इस व्यवस्था में जमींदार और अंग्रेजी सरकार के सारे हित तो सुरक्षित थे लेकिन किसानों के हितों पर कोई ध्यान नहीं दिया गया। लगान वसूली जमींदारों के अधिकारों के अंतर्गत आने पर उन्होंने व उनके कारिन्दों ने किसानों का शोषण करना एवं उन पर अत्याचार करना प्रारम्भ कर दिया प्रेमचंद इस व्यवस्था का विरोध कर किसानों को ही जमीन का मालिक बनाने के पक्षधर हैं। उनकी दृष्टि में कृषकों के विकास के लिए जमींदार प्रथा का खत्म होना अत्यावश्यक है। "प्रेमशंकर भी अक्सर कृषकों की आर्थिक दुरवस्था पर विचार किया करते थे। अन्य अर्थशास्त्रवेत्ताओं की भाँति वह कृषकों पर फजूलखर्ची, आलस्य, अशिक्षा या कृषि विधान से अनभिज्ञता का दोष लगाकर इस प्रश्न को हल न करते थे।.....उनकी दरिद्रता का उत्तर दायित्व उन पर नहीं, बल्कि उन परिस्थितियों पर है, जिनके अधीन उनका जीवन व्यतीत होता है। और वह परिस्थितियाँ क्या हैं? आपस की फूट, स्वार्थपरता और ऐसी संस्था का विकास, जो उनके पाँव की बेड़ी बनी हुई है, लेकिन जरा और विचार कीजिए तो यह तीनों टहनियाँ एक ही शाखा से फूटी हुई प्रतीत होंगी और यह वही संस्था है जिसका अस्तित्व कृषकों के रक्त पर अवलम्बित है।..... इस परस्पर विरोध का सब से दु:खजनक फल क्या है? भूमि का क्रमश: अत्यन्त अल्प भागों में विभाजित हो जाना और उसके लगान की अपरिमित वृद्धि।" यानी कुल मिलाकर प्रेमशंकर जमींदार-कृषक संघर्ष की जड़ अंग्रेजी राज की जमींदारी प्रथा को मानते हैं। इस व्यवस्था में सरकार ने लगान वसूली का कार्य चूँकि जमींदारों पर ही छोड़ दिया था अत: जमींदारों ने मनमाने ढंग से किसानों का शोषण किया और उन पर अत्याचार किए। इस शोषण का साक्षात् रूप हमें लखनपुर के जमींदार ज्ञानशंकर और वहाँ के किसानों के रूप में प्रेमाश्रम में दिखाई देता है लेकिन इस पूरी व्यवस्था का प्रत्यक्ष विरोध उपन्यास में कहीं भी प्रेमशंकर ने नहीं किया है। अप्रत्यक्ष रूप से वे किसानों की सहायता अवश्य करते हैं लेकिन उन्हें इस व्यवस्था के विरोध में संगठित करने का कोई प्रयास नहीं करते।

राय कमलानंद बहादुर :- 'प्रेमाश्रम' में हमें जमींदार वर्ग के विभिन्न प्रकार के प्रतिनिधित्व दृष्टिगत होते हैं जिनमें एक पृथक वर्ग के प्रतिनिधि राय कमलानंद हैं। इनका व्यक्तित्व प्रभाशंकर, ज्ञानशंकर और प्रेमशंकर से सर्वथा अलग है। इनकी दृष्टि और सोच भी अलग है। वे लखनऊ के बड़े रईस और ताल्लुकेदार हैं। प्रेमचंद ने उनका वर्णन इस प्रकार किया है - "राय साहब बड़े रसिक पुरुष थे। घुड़दौड़ और शिकार, सरोद और सितार से उन्हें समान प्रेम था। साहित्य और राजनीति के भी ज्ञाता थे।.....इधर दस बारह वर्षों से राजनीति में भी प्रविष्ट हो गए थे। कौंसिल भवन में उनका स्थान प्रथम श्रेणी में था।.....राष्ट्र या शासन के दास बनकर सर्वदा अपनी विचारशक्ति से काम लेते थे।" कुल मिलाकर रायसाहब सर्वगुण संपन्न और बहुज्ञ थे। लेकिन जमींदार के रूप में उनका वही चरित्र था जो अंग्रेजी सरकार

की व्यवस्था के तहत जमींदारों का था। यानी शोषण और अत्याचार में वे भी कम न थे। उनकी पुत्री विद्या उनके बारे में कहती है –"उस साल जब अकाल पड़ा और प्लेग भी फैला, तब हम लोग इलाके पर गये।.....उन दिनों बाबूजी की निर्दयता देखकर मेरे रोयें खड़े हो जाते थे। असामियों से रूपये वसूल न हो तो वह चिढ़कर असामियों पर गुस्सा उतारते। सौ-सौ मनुष्यों को एक पाँति में खड़ा करके हण्टर से मारने लगते। बेचारे तड़प-तड़प कर रह जाते; पर उन्हें तनिक भी दया न आती।" जिस जमींदार वर्ग के प्रतिनिधि राय साहब हैं उसके सभी गुण अत्याचार शोषण, लगान वृद्धि, अंग्रेजी राज का समर्थन, उनमें मौजूद है। वे कहते है- "मैं मानता हूँ कि जमींदार के हाथों किसानों की बड़ी दुर्दशा होती है। मैं स्वयं इस विषय में सर्वथा निर्दोष नहीं हूँ, बेगार लेता हूँ, डांड़-बाँध लेता हूँ, बेदखली या इजाफा का कोई अवसर हाथ से नहीं जाने देता, असामियों पर अपना रोब जमाने के लिए अधिकारियों की खुशामद भी करता हूँ, साम, दाम, दण्ड, भेद सभी से काम लेता हूँ, पर इसका कारण क्या है? वही पुरानी प्रथा किसानों की मूर्खता और अज्ञान।" लेकिन फिर भी वे किसानों को उचित शिक्षा देने के पक्ष में नहीं है। उनका मानना है कि किसानों को उचित शिक्षा मिलते ही किसान जागरूक हो जाएँगे। खेती का ही व्यवसाय न अपनाकर अन्य धंधे अपनाने लगेंगे और जमींदारों के हाथ से सभी मौके निकल जाएँगे। यहा प्रेमचंद स्पष्ट करते हैं कि किसानों के शोषण का कारण उनकी अशिक्षा और पारस्परिक द्वेष तथा संघर्ष है। यही जड़ है उनके शोषण की। प्रेमाश्रम में भी जब तक लखनपुर के किसान पारस्परिक द्वेष रखते हैं तथा एक दूसरे की जड़े काटते हैं तब तक उन पर जमींदार तथा उसके करिन्दों का अत्याचार होता रहता है, लेकिन जब उसमें एका हो जाता है तो उनके गाँव का रंग-ढंग बदल जाता है।

उपन्यास में आगे चलकर राय साहब का दूसरा रूप भी दृष्टिगत होता है। वे यौगिक क्रियाएँ करते हैं उनका योग 'गुफाओं और कन्दराओं में बैठकर तप और ध्यान का स्वांग' भरने वाला योग नहीं है। उनके अनुसार - "योग कोई दैहिक क्रिया नहीं है। आत्मशुद्धि, मनोबल और इन्द्रिय दमन ही सच्चा योग सच्ची तपस्या है। वासनाओं में पड़कर अविचलित रहना ही सच्चा वैराग्य है।" उनकी यही योग सिद्धि उन्हें ज्ञानशंकर द्वारा दिए गए विष से भी बचाती है। वे जान बूझकर विषपान कर जाते हैं क्योंकि वे 'शक्ति के उपासक' हैं और विष उनके लिए 'दूध और पानी' है। जिस समय प्रेमाश्रम की रचना हो रही थी, उस समय के समाज में तंत्र-मंत्र योग सिद्धि का अत्यधिक प्रचार था। समाज पर अपनी धाक जमाने के लिए और सदैव स्वस्थ रहने के लिए योग सिद्धियों का प्रचलन था। प्रेमचंद भी उस की उपेक्षा कैसे कर सकते थे। यहाँ भी राय साहब ने अपने अक्षुण्ण यौवन के लिए योग-सिद्धि का सहारा लिया है।

एक पिता के रूप में रायसाहब का चरित्र बहुत अधिक भावुक या संतान प्रिय तो नहीं दिखाई देता लेकिन जब उनका दामाद ज्ञानशंकर अपनी साली गायत्री के प्रति आसक्त होता है और उसका शीलभंग करना चाहता है तब रायसाहब के अन्दर का पिता जाग उठता है। वे साफ शब्दों में ज्ञानशंकर को गायत्री से 'प्रेम का स्वांग भरकर' उसके जीवन रत्न पर हाथ बढ़ाने के लिए मना करते हैं। इतना ही नहीं वे ज्ञानशंकर की पत्नी और अपनी बेटी विद्या को चेतावनी देते हैं - सरल हृदय गायत्री की रक्षा का तुम्हारे ही ऊपर है। अगर उसके सतीत्व पर जरा भी धब्बा लगा तो तुम्हारे कुल का सर्वनाश हो जाएगा।"

मनोहर और बलराज : मनोहर और बलराज 'प्रेमाश्रम' में लखनपुर के कृषक वर्ग के प्रतिनिधि हैं। यही दोनों चरित्र उपन्यास में सबसे पहले जमींदारी शोषण के विरुद्ध आवाज उठाते हैं। पूरे लखनपुर के निवासी मनोहर और बलराज के विरुद्ध हैं। केवल कादिर मियाँ उनका साथ देते हैं। वह भी विद्रोह में नहीं बल्कि मालिकों के गुस्से से उन्हें बचाने में।

वास्तव में जमीन किसान की है लेकिन अंग्रेजों की सहायता से जमींदार उस ज़मीन के स्वामी बन बैठते हैं। किसानों द्वारा जोते जाने वाली ज़मीन पर जमींदारों का प्रभुत्व हो जाता है। अंग्रेजों द्वारा की गई इस व्यवस्था में भूमि पर किसानों का स्वामित्व समाप्त हो गया और जमींदारी को कानून से अधिकार मिल गया। इन्हीं अधिकारों का दुरुपयोग जमींदारों ने किया और किसानों का तरह–तरह से शोषण किया जाने लगा – जिनमें लगान में वृद्धि बेगारी, आदि प्रमुख थे। यहीं नहीं पारिवारिक उत्सवों पर भी किसानों द्वारा ही धन या सामान लिया जाने लगा। दैवी प्रकोपों में तो किसानों की मदद करने के लिए जमींदार वर्ग आगे कभी न

आते लेकिन उनका शोषण करने में पीछे भी न रहते। ऐसे समय में जब जमींदारों को मनमानी करने की छूट थी और सरकार का समर्थन भी प्राप्त था,'प्रेमाश्रम' के मनोहर और बलराज विद्रोह के लिए उद्यत होते हैं।

उपन्यास के प्रारंभ में ही मनोहर जमींदार के कारिन्दे से घी के रूपये लेने से साफ मना कर देता है। जमींदार को पिता की बरसी पर घी चाहिए। इसके लिए वह रूपये सेर के भाव पर किसानों को रूपये बँटवाता है लेकिन बाजार भाव दस छटाँक का है। मनोहर को यह बात अखरती है। बाकी सब गाँव वाले तो चुपचाप रूपये ले लेते हैं लेकिन मनोहर जमींदार के आदमी से उलझ पड़ता है। जिसके फलस्वरूप उसकी पेशी जमींदार के यहाँ होती है। उस पर लगान वृद्धि की जाती है। प्रेमचंद ने यहाँ एक किसान की दयनीय दशा का चित्रण किया है। मनोहर ने कोई गलती नहीं थी। लेकिन उसकी बात न सुनी जाकर जमींदार को अपनी इज्जत और रोब बढ़ाने और बरकरार रखने के लिए किसानों की उठती आवाज को दबाना जरूरी है और इसे लगान वृद्धि करके ही दबाया जा सकता है। लेकिन मनोहर कहाँ दबने वाला था। "जिस दिन से वह ज्ञानशंकर की कठोर बातें सुनकर लौटा था, उसी दिन से विकृत भावनाएँ उसके हृदय और मस्तिष्क में गूँजती रहती थीं।.....वह ईंट का जवाब पत्थर से देना चाहता था। वह जानता था कि सबलों से बैर बढ़ाने में मेरा ही सर्वनाश होगा, किन्तु इस समय उसकी अवस्था उस मनुष्य की सी हो रही थी, जिसके झोंपड़े में आग लगी हो और वह उसके बुझाने में असमर्थ होकर शेष भागों में भी आग लगा दे कि किसी प्रकार विपत्ति का अंत हो।" यही नहीं गौस खाँ जब बेदखली के सम्मन की धमकी देते हैं तो वह कहता है - "यहाँ हमारे खेतों की मेड़ों पर कोई आया तो उसके बाल बच्चे उसके नाम को रोएँगे।"

एक किसान जो कि जमींदार की जमीनें जोतता है, बेगारी भी करनी ही पड़ती है, उसके पास अपना कहने के लिए कोई जमीन नहीं, अगर कभी सिर उठाए तो जमींदार सिर कुचलने को तैयार बैठा हैं ऐसे किसान मनोहर में भी **स्वाभिमान** कूट कूट कर भरा है। जमींदार का कारिन्दा गौस खाँ उसकी पत्नी बिलासी को गाँव के चरावर में मवेशी चराने से मना करता है। बिलासी नहीं मानती। गौस खाँ और उसके आदमी बिलासी के सभी मवेशी कांजी हाउस ले जाने लगते हैं। बिलासी धमकी देती है - "कहे देती हूँ, इन जानवरों के पीछे लोहू की नदी बह जायेगी माथे गिर जाएँगे।" वे नहीं मानते। बिलासी को लहू लुहान कर देते हैं। मनोहर अपनी पत्नी की 'मान मर्यादा का रक्षक' है। अपने पुत्र के रुष्ट होने पर 'भयंकर संकल्प और घातक निश्चय' लेकर समझाता है - "अभी जाओगे तो बात बढ़ेगी और कुछ हाथ नहीं लगेगा। चार आदमी तुम्हीं को बुरा कहेंगे। अपमान का बदला इस तरह नहीं लिया जाता।" यहाँ स्वाभिमान और क्रोध की चिनगारी मनोहर और बलराज दोनों में हैं। दोनों बिलासी की दशा से क्रोधित हैं। यहाँ प्रेमचंद दोनों की दशाओं का चित्रण करते हुए कहते हैं - एक ही अग्नि दोनों के हृदय में प्रज्ज्वलित थी,एक ओर सुलगती हुई, दूसरी ओर दहकती हुई। एक ओर वायु के वेग से चंचल, दूसरी और निर्बलता से निश्चल। एक ही भावना दोनों के हृदय में थी, एक में उद्दम-उच्छृंखल, दूसरे में गम्भीर और स्थिर।" मनोहर अपने 'मरजाद' की रक्षा करना चाहता है। उसका मानना है कि "बेइज्जत होकर जीने से मर जाना अच्छा है।" और इस आत्मसम्मान की रक्षा वह गौस खाँ की हत्या करके ही करता है। एक साधारण किसान द्वारा जमींदार के कारिन्दे की हत्या? वह भी उस युग में जब किसानों को अत्याचार और शोषण के बल पर अंगेजी राज के दलाल जमींदार पैरों तले ही रखते थे। एक किसान का ऐसा विद्रोह प्रेमचंद ही उस युग में दिखा सकते थे।

मनोहर गौस खाँ की हत्या के लिए आत्मसमर्पण कर देता है क्योंकि वह नहीं चाहता कि गाँव के अन्य लोग उसके कारण फँसें। लेकिन जमींदार गाँव के लगभग सभी बालिगों को हत्या के आरोप में जेल करवा देता है। गाँव वाले मनोहर पर क्रोधित होते हैं उसे धिक्कारते हैं। यद्यपि कादिर गाँववालों को कहता है कि मनोहर ने जो कुछ किया उसमें उनके हक की भी रक्षा है। तब भी गाँववाले मनोहर को दोषी ठहराते है। मनोहर टूट जाता है। उसकी सहनशक्ति जवाब दे जाती है और उसका अंत आत्महत्या में होता है।

बलराज मनोहर का पुत्र है। मनोहर और बलराज के विरोध में अन्तर है। बलराज अखाड़े जाता है और लाठी के जोर पर काम करता है। मनोहर में पुत्र के प्रति ममत्व है। वह बलराज को हमेशा अपने संरक्षण में रखने का प्रयत्न करता है। जमींदार का गुलाम बनना

बलराज को पसंद नहीं - "अब तो शहरों में मजूरों की मांग है, रूपया रोज खाने को मिलता है, रहने को पक्का घर अलग। अब हम जमींदार की धौंस क्यों सहें, क्यों भरपेट खाने को तरसें?" बलराज को देश विदेश की भी जानकारी है। उसके पास जो पत्र आता है उसमें लिखा है - "रूस देश में कास्तकारों का ही राज है, वह जो चाहते हैं करते हैं। उसी के पास कोई और देश बलगारी है। वहाँ अभी हाल की बात है, कास्तकारों ने राजा को गद्दी से उतार दिया है और अब किसानों और मजदूरों की पंचायत राज करती है।" डॉ. रामविलास शर्मा का बलराज के चरित्र के संबंध में कहना है कि "प्रेमचंद ने बलराज की हिन्दुस्तान के किसान - नौजवान का प्रतिनिधि बनाया है। वह कसरत कुश्ती का शौकीन है, गाना बजाना, दोस्ती में गपशप करना उसे पसंद है। दुनिया का अनुभव कम है, इसलिए उतावलापन उसमें ज्यादा है। वह एक नए आदर्श से प्रभावित है, जिसके अनुसार हर इंसान को इंसान की तरह रहने का हक मिलना चाहिए।" यह नौजवान किसान बेगारी नहीं करना चाहता। उसकी इतनी हिम्मत है कि वह डिप्टी साहब के उस चपरासी से भी नहीं डरता जिससे सारा गाँव थर्राता है। उसे परमात्मा ने हाथ पैर दिए हैं। मेहनत कर के खुद भी खा सकता है और दो को खिला सकता है। वह 'पसीने की रोटी' खाएगा और 'अकड़कर' चलेगा।

बलराज के **स्वाभिमान** और उसकी **स्पष्ट वादिता** से हाकिम के कारिन्दे उस पर कुपित हो जाते हैं। वे लश्कर ले जाकर बलराज की ऐंठन और गर्मी उतारना चाहते हैं - लेकिन बलराज भी चुप नहीं बैठता। उसका कहना है - "मियाँ हमारी गरमी पाँच-पाँच रुपल्ली के चपरासियों के मान की नहीं है,.....।" प्रेमाश्रम का बलराज उद्दण्ड अवश्य प्रतीत होता है, लेकिन उसकी यह उद्दण्डता उन परिस्थितियों ने बनाई है जिसमें उसका पालन हुआ है। वह देखता है कि गाँव के सभी लोग जमींदार से, जमींदार के कारिन्दों से, हाकिम से, यहाँ तक कि हाकिम से चपरासी से भी दबते हैं। कोई उन्हें पलट कर जवाब नहीं देता। वह सोचता है - "मालूम होता था किसी के मुँह में जीभ ही नहीं है। तभी तो यह दुर्गति हो रही है। अगर कुछ दम हो तो आज इतने पीसे कुचले क्यों जाते?" और उसमें वह **दम** है। तभी वह इतनी हिम्मत करता है कि डिप्टी साहेब को उनके आदमियों की करतूतें सुनाए। कैम्प में ही सैयद ईजाद हुसैन की कठोर बातें सुनकर वह गम्भीर होकर साफ-साफ कह देता है - "आप क्या चाहते हैं कि हम लोगों पर अन्याय भी हो और हम फरियाद भी न करें?" बलराज के रूप में प्रेमचंद ने उस युग के एक ऐसे कृषक नौजवान का चित्रण किया है जो अन्याय को सहेगा नहीं अपितु बराबर उसका जवाब देगा। उपन्यास के अंत में जब पहले की जमींदारी किसानी व्यवस्था समाप्त हो, नई व्यवस्था लागू होती है तब बलराज जिला सभा का सदस्य बन जाता है और बोर्ड के जलसे में वह प्रस्ताव रखता है कि "कोई हाकिम देहात जाकर गाँव वालों से किसी तरह की खिदमत का काम न लें - पानी, भरना, घास छीलना, झाड़ू लगाना। जो रसद दरकार हो, वह गाँव के मुखिया से कह दी जाय और बाजार भाव से उसी दम दाम चुका दिया जाय।.....सरकारी काम प्रजा को कष्ट देकर और उनका अपमान करके नहीं होना चाहिए।" उसका यह प्रस्ताव स्वीकृत भी हो जाता है। जिस बेगारी के लिए, जिस अपमान के लिए वह उपन्यास के प्रारंभ में जूझता है उन सबका निपटारा उसके प्रस्ताव ने कर दिया है। यही नहीं उसने लखनपुर में अपना वाचनालय बनाया है जिसमें अच्छे-अच्छे पत्र भी आते हैं। उसकी मेहनत और नयी दिशा से अब ड्योढ़ी पैदावार होती है। लखनपुर गाँव में उसके प्रयत्नों से जागृति आ गई है। यही गाँव प्रेमचंद के स्वप्न का गाँव है, जहाँ सारी पैदावार 'लगान और महाजन' की भेंट न हो अपितु किसान को उसकी मेहनत का पूरा फल मिले।

प्रेमाश्रम में कुछ पात्र हाकिम वर्ग का प्रतिनिधित्व करते हैं और कुछ ऐसे गाँव वाले किसानों का जो सारा अत्याचार और शोषण सहते हुए भी चुप हैं, वास्तव में यह उनकी मजबूरी है। हाकिम वर्ग में डिप्टी ज्वालासिंह का चरित्र सबसे अधिक उभरकर आया है। न तो वह कहीं भी कर्तव्य पथ से विचलित हुआ है और न कहीं उसने अपना आत्मसम्मान और सज्जनता दाँव पर लगाई है। वह सहृदय व्यक्ति है और गाँववालों के साथ उसे सहानुभूति है। जमींदार की दोस्ती और खुशामद भी उसे कर्तव्य से विचलित नहीं करती। वह अपने निर्णय स्वयं अपने विवेक से लेता है दोस्ती या प्रेम के वशीभूत होकर नहीं, चाहे इसके लिए उसे नौकरी से इस्तीफा ही क्यों न देना पड़े। वे 'जो कुछ करते हैं न्याय के बल पर करते है। पुलिस क्या, ईश्वर का अनुचित दबाव भी नहीं मान सकते।' (प्रेमाश्रम)।

किसानों से उसे सहानुभूति है। उनके दु:ख दर्द में वह प्रेमशंकर के साथ ही शरीक होता है। यहाँ तक कि जब मनोहर की आत्महत्या के बाद बलराज और कादिर को काले पानी की और शेष अभियुक्तों को सात-सात वर्ष के सपरिश्रम कारावास की सजा सुनाई जाती है तो वह अवधि रहते उनकी तरफ से अपील करने के लिए नौकरी से इस्तीफा तक दे देते हैं। पत्नी द्वारा इस्तीफे का विरोध करने पर कहते हैं, 'वहाँ मुझे कितनी ऐसी ही बातें करनी पड़ेंगी जो दासत्व की बेड़ियाँ पहने हुए वहीं कर सकता। रूपये के लिए चन्दे माँगना, वकीलों से मिलना-जुलना, लखनपुर वालों के कष्ट-निवारण की आयोजना करना, यह सभी काम करने पड़ेंगे। पुलिसवालों की निगाह पर चढ़ जाऊँगा, अधिकारी वर्ग तन जाएँगे, तो इस बेड़ी को काट ही क्यों न दूँ? मुझे पूरा विश्वास है, मैं स्वाधीन होकर जितनी जाति-सेवा कर सकता हूँ, उतनी इस दशा में कभी न कर सकूँगा।' और अन्तत: ज्वालासिंह भी प्रेमशंकर के प्रेमाश्रम को ही अपना निवास बनाते हैं।

'प्रेमाश्रम'में **कादिर मियाँ** हैं। उन्हें मनोहर से सहानुभूति है, बलराज से प्रेम है, गाँव के किसानों की दशा से दु:खी हैं लेकिन खुला विरोध नहीं कर पाते। उन्हें दूसरे गाँव की उस बूढ़ी मरीज से भी सहानुभूति है जिसे लश्कर वाले उसकी गाड़ी से उतार कर उस गाड़ी में अपना सामान लाद देते हैं। उस बेबस बुढ़िया और उसके बेटे को भी कादिर मियाँ ही पनाह देते हैं। लेकिन कादिर मियाँ जमींदार का सीधा प्रतिरोध करने के लिए तैयार नहीं हैं। मनोहर और जमींदार की बहस में भी वह प्रेम और दीनता से निपटारा करना चाहते हैं। कादिर मियाँ के बारे में प्रेमचंद लिखते हैं - 'उसके हृदय में राग और द्वेष के लिए स्थान न था और न इस बात की परवाह थी कि मेरे विषय में कैसे-कैसे मिथ्यालाप हो रहे हैं। वह गाँव में विद्रोह को भड़का सकता था; खाँ साहब और उनके सिपाहियों की खबर ले सकता था। गाँव में ऐसे कई नवयुवक थे जो इस अनिष्ट के लिए आतुर थे। किन्तु कादिर उन्हें सँभाले रखता था।' कादिर मनोहर और बलराज को प्रतिरोध करने से रोकता रहता है। वह सहिष्णुता को सर्वोपरि मानता है। लेकिन जब मनोहर गौस खाँ की हत्या करता है और गाँव वाले उसे धिक्कारते हैं तो वही कादिर कहता है - 'यारो! ऐसी बातें न करो, बेचारे ने तुम लोगों के लिए तुम्हारे हक की रक्षा करने के लिए यह सब किया।.....हम सब के सब कायर हैं, वही एक मर्द है।' यानी आज तक जो जमींदार का अन्याय सहकर गाँव वाले चुप थे और कादिर भी सहनशीलता के कारण और ईश्वर का अन्याय समझकर प्रतिरोध नहीं करता था वह मान जाता है कि ऐसा न करना कायरता की निशानी है। यहाँ प्रेमचंद का संदेश उन किसानों के लिए है यहाँ जो शोषण और अत्याचार सहकर भी आंदोलन में भाग नहीं लेते। यहाँ प्रेमचंद का मानना है कि प्रतिरोध करने पर ही किसानों को उनके अधिकार मिल सकते हैं अन्यथा नहीं।

10.4.2 प्रमुख नारी पात्र

प्रेमाश्रम में कुल मिलाकर पाँच प्रमुख नारी पात्र हैं। ये हैं- गायत्री, विद्या, श्रद्धा, बिलासी और शीलमणि। इसमें गायत्री, विद्या और श्रद्धा का संबंध जमींदार वर्ग से है। शीलमणि डिप्टी ज्वालासिंह की पत्नी है और बिलासी गाँव के कृषक वर्ग के प्रतिनिधि मनोहर की पत्नी है। पाँचों महिला पात्रों के चरित्र की अलग-अलग विशिष्टताएँ हैं।

गायत्री राय कमलानंद की पुत्री और विद्या की बड़ी बहन है। उसके पति की मृत्यु हो चुकी है और वह गोरखपुर की जमींदारी संभालती है। धर्म और ईश्वर भक्ति में उसकी रुचि है। गायत्री जमींदारी के कार्य को पूरी तन्मयता और परिपक्वता से संभालती है। वह भी उन्हीं जमींदारों में से है जो सरकार की राह पर असामियों पर अत्याचार करते हैं और उनका शोषण करते हैं - 'असामियों में यह धुन न जाने कैसे समा गयी, कि जहाँ देखो वहीं उपद्रव करने पर तत्पर दिखाई देते हैं। सरकार को इन पर कड़ा हाथ रखना चाहिए। जरा सी शह मिली और यह काबू से बाहर हुए। अगर इस इलाके में असामियों की छूट हो गयी तो मेरा 20-25 हजार का नुकसान हो जाएगा।..... छूट भी हो जाय मगर लूँगी असामियों से हीं।'' यही नहीं किसानों से धन वसूलने की प्रक्रिया के संबंध में वह अपनी बहन से कहती है - 'तुम्हारे जीजा कैसे सज्जन थे, द्वार पर से किसी भिक्षुक को निराश न लौटने देते। सत्कार्यों में हजारों रूपये खर्च कर डालते थे।.....लेकिन उन्हें भी असामियों पर सख्ती करनी पड़ती थी। मैने स्वयं उन्हें असामियों की मुश्कें कस के देखा है। जब कोई अन्य उपाय पिटवाते न

सूझता तो उनके घरों में आग लगवा देते थे और अब मुझे भी वही करना पड़ता है।' लेकिन उपन्यास में आगे चलकर जमींदार गायत्री के चरित्र के एक अन्य रहस्य का उद्‌घाटन होता है। बाढ़ में कई गाँव डूब जाते हैं। किसान जमींदार से छूट की प्रार्थना करते हैं। सरकारी कर्मचारी बिना किसी छानबीन के लिख देते हैं कि छूट की आवश्यकता नहीं। परन्तु गायत्री विश्वास नहीं करती। वह गाँव का दौरा करके स्वयं निर्णय लेना चाहती है। यही नहीं आगे चलकर वह कानूनगो से कहती है -'अगर अपनी तरफ से प्रजा की कुछ भलाई न कर सकें तो कम-से-कम अपने हाथों से उनका अहित तो न करना चाहिए।'' यानी एक कठोर जमींदार में भी उन कृषकों से सहानुभूति भी है, जिनका शोषण करने में उसके कारिन्दे कोई कसर नहीं छोड़ते।

गायत्री के व्यक्तित्व का दूसरा पक्ष उसके और ज्ञानशंकर के संबंधों में स्पष्ट हुआ है। उसका हृदय वासनायुक्त प्रेम से अनभिज्ञ था क्योंकि उनका पति दुराचारी था और गायत्री उसके 'मनोभावों की तह' तक कभी नहीं पहुँच सकी। वह आध्यात्मिक श्रद्धा से ही पति का स्मरण किया करती थी। ज्ञानशंकर के संपर्क में आने के बाद ही वह प्रेम के इस पक्ष से अवगत होती है। वह अपने प्रेम को राधा और कृष्ण के प्रेम के तहत देखती है जहाँ वासना नहीं केवल निर्मल हृदय का प्रेम है। लेकिन जब उसे ज्ञानशंकर के कलुषित हृदय की भावनाओं का ज्ञान होता है तब देर हो चुकी होती है। वह प्रेम के इस कलुषित खेल के कारण अपनी बहन विद्या को भी खो देती है। विद्या की मृत्यु के बाद गायत्री का हृदय परिवर्तन होता है। वह ज्ञानशंकर की संकीर्णता और स्वार्थपरता से अवगत होती है। प्रेमचंद ने लिखा है कि 'गायत्री की कथा प्रेम से शुरू होकर आत्म-ग्लानि पर समाप्त होती है।'' वह मानती है कि जिसे वह भक्ति कहती थी वह उसकी आत्म दुर्बलता और ज्ञानशंकर की काम–तृष्णा का परिणाम था। उसकी यही आत्मग्लानि उसे बद्रीनाथ की यात्रा के लिए प्रेरित करती है। चित्रकूट में उसका अपने पिता राय कमलाचंद से साक्षात्कार होता है जो सिद्ध पुरुष बन गए हैं। ग्लानि, लज्जा और निराशा से भरी वह शिखर से गिर कर प्राणोत्सर्ग कर देती है। लेकिन मृत्यु से पहले अपने दत्तक पुत्र मायाशंकर को सुपात्र प्रेमशंकर के हाथों में सौंप जाती है। उसके अपने पिता ज्ञानशंकर के नहीं।

विद्या और **श्रद्धा** यूँ तो जमींदार परिवार से ही संबद्ध हैं लेकिन उनके विचार अलग हैं। विद्या गायत्री की बहन है किन्तु उसका स्वभाव गायत्री के विपरीत है। प्रेमचंद ने विद्या को एक पतिपरायणा सरल स्त्री के रूप में चित्रित किया है जो अपने पति ज्ञानशंकर को भी सरलता के और सही मार्ग पर चलने को उद्यत करती रहती है। वह भारतीय नारी के उस रूप का प्रतीक है जो पति के दुर्गुणों को अनदेखा कर केवल उसमें सद्‌गुण तलाशने का प्रयत्न करती है और जब उसका मोहपाश टूटता है तब उसके समक्ष मृत्यु के अतिरिक्त कोई रास्ता नहीं रह जाता है। विद्या ज्ञानशंकर की असलियत जानकर विषपान कर लेती है।

प्रेमचंद की नारी संबंधी मान्यता है कि 'मेरी नारी का आदर्श एक ही स्थान पर त्याग, सेवा और पवित्रता का केंद्रित होना है। त्याग बिना फल की आशा के हो, सेवा सदैव बिना असन्तोष प्रकट हुए हो, और पवित्रता सीज़र की पत्नी की भाँति ऐसी हो जिसके लिए पछताने की आवश्यकता न पड़े।' श्रद्धा का व्यक्तित्व ऐसी ही गौरव युक्त नारी का है जो अपना आत्माभिमान पूरे उपन्यास में नहीं छोड़ती। वह धर्मभीरु है और पति प्रेमशंकर के विदेश से लौटने पर उनके प्रायश्चित करने को धर्म मानती है। पति के ऐसा न करने पर वह उनके साथ कोई संबंध रखने में संकोच करती है। प्रेमचंद लिखते है - 'श्रद्धा को सामाजिक अवस्था और समयोचित आवश्यकताओं का ज्ञान था। परम्परागत बन्धनों को तोड़ने के लिए विचार-स्वातंत्र्य और दिव्य ज्ञान की ज़रूरत है उससे वह रहित थी। वह एक साधारण हिंदू अबला थी। वह अपने प्राणों से, अपने प्राण प्रिय स्वामी से हाथ धो सकती थी, किन्तु अपने धर्म की अवज्ञा करना अथवा लोकनिन्दा को सहन करना उसके लिए असंभव था।' लेकिन उसे अपने पति प्रेमशंकर पर पूर्ण विश्वास भी है। ज्ञानशंकर द्वारा उनकी निंदा करने पर तथा यह समझाने पर कि वह लखनपुर का आधा गाँव प्रेमशंकर से अपने नाम लिखवा ले, वह कहती है - 'वह मेरे स्वामी हैं, जो कुछ करेंगे, उसी में मेरी भलाई है।' अंत में स्वीकार कर लेती है कि सच्चा प्रायश्चित तो परोपकार है। गायत्री का भी सही मार्गदर्शन करने में श्रद्धा का ही हाथ है वह गायत्री को समझाती है - ''भगवान ने तुम्हें धन दिया है। उससे अच्छे काम करो। अनाथों और विधवाओं को पालो, धर्मशालाएँ बनवाओ, तालाब और कुएँ खुदवाओ, भक्ति को

छोड़ कर ज्ञान के मार्ग पर चलो।' उपन्यास में श्रद्धा विद्या और गायत्री तीनो अपनी-अपनी परिस्थितियों से दु:खी हैं लेकिन केवल श्रद्धा के पास ही इनसे टक्कर लेने की शक्ति और सही निर्णय लेने की दृष्टि है।

बिलासी कृषक वर्ग का प्रतिनिधित्व करती है। वह लखनपुर के किसान मनोहर की पत्नी और बलराम की माँ है। 'प्रेमाश्रम'में यदि जमींदारों के अत्याचारों के प्रतिरोध में किसी महिला ने आवाज़ उठाई है तो वह बिलासी है। उपन्यास का एक अंश उदाहरण के लिए देखते हैं। जमींदार के कारिन्दे गाँव के चरावर पर रोक लगा देते हैं। कोई अपना मवेशी चराने वहाँ नहीं जा सकता। बिलासी पहुँचती है। गौस खाँ उसके मवेशियों को काँजीहाउस ले जाने की धमकी देते हैं। वह नहीं मानती। गौस खाँ और उसके कारिन्दे मवेशियों को घेर कर ले जाने लगते हैं। 'जब जानवर कोई बीस कदम निकल गए तब वह उन्मत्त की भांति दौड़ी और हाँफते हुए बोली, मैं कहती हूँ कि इन्हें छोड़ दो, नहीं तो ठीक नहीं होगा।

फैजू - हट जा रास्ते से! कुछ सामत तो नहीं आई है? बिलासी रास्ते में खड़ी हो गयी और बोली, ले कैसे जाओगे? दिल्लगी है?

गौस खाँ - न हटे तो इसकी मरम्मत कर दो।

बिलासी - कहे देती हूँ, इन जानवरों के पीछे लोहू की नदी बह जायगी, माथे गिर जायेंगे।

फैजू - हटती है या नहीं चुड़ैल?

बिलासी - तू हट जा, दाढ़ीजार।

इतना उसके मुँह से निकलना था कि फ़ैजू ने आगे बढ़कर बिलासी की गर्दन पकड़ी और उसे इतने ज़ोर से झोंका दिया कि वह दो कदम पर जा गिरी।'

इतनी मुँहजोर किसान महिला इससे पहले के किसी उपन्यास में अवतरित नहीं हुई थी। यह हिम्मत बिलासी ने की और जो उसने कहा था वही हुआ। गौस खाँ की हत्या का कारण यही प्रकरण था। यद्यपि उपन्यास में आगे चलकर बिलासी को गाँव वालों की उपेक्षा और उपहास का कारण बनना पड़ता है। उनके कटु वचन भी सहने पड़ते हैं। प्रतिरोध की उसे बहुत बड़ी कीमत चुकानी पड़ती है। जो उस युग के समाज में नारी की स्थिति का उद्‌घाटन है।

10.5 भाषिक - योजना

'प्रेमाश्रम'की भाषिक योजना भी सूझ बूझ के साथ गढ़ी गई है। प्रेमाश्रम में जमींदार और किसान दोनो ही वर्ग के प्रतिनिधि हैं। जमींदार भी ऐसे हैं जो अंग्रेजी पढ़े लिखे हैं, अंग्रेजों के साथ उठते-बैठते हैं। किसान ठेठ देहाती हैं। यद्यपि सूझ-बूझ की बातें वे भी करना जानते हैं। कुछ किसान पढ़े लिखे हैं। उनके यहाँ पत्र आता है जिसमें देश-विदेश की जानकारी भी रहती है। इन सभी वर्गों के चरित्रों के लिए तथा चरित्रों के रहस्यों को खोलने के लिए प्रेमचंद ने भी अपने विचार व्यक्त किए हैं। इन सभी पक्षों के लिए उपन्यास में उपयुक्त भाषा की योजना की गई है। यद्यपि प्रेमचंद जन-साधारण की सहज और सरल भाषा में लेखन करना स्वीकार करते हैं लेकिन जहाँ साहित्य में चिन्तन और विवेचन हो वहाँ सरल सहज भाषा को छोड़कर गम्भीर और गूढ़ शब्दों का प्रयोग करना भी आवश्यक हो जाता है। प्रेमाश्रम में भी यही पक्ष दिखाई देता है। चरित्रों, अवसरों और विवेचन के अनुसार भाषा भी परिवर्तित होती गई है।

उपन्यास के प्रारम्भ में ही प्रेमचंद ने जो वर्णन किया है उससे पाठक को लखनपुर की स्थिति और उसके निवासियों का ज्ञान होता है - 'सन्ध्या हो गई है। दिन-भर के थके माँदे बैल खेतों से आ गये हैं। घरों से धुएँ के काले बादल उठने लगे। लखनपुर में आज परगने के हाकिम की पड़ताल थी। गाँव के नेतागण दिन-भर उनके घोड़े के पीछे-पीछे दौड़ते रहे थे। इस समय वह अलाव के पास बैठे हुए नारियल पी रहे हैं और हाकिमों के चरित्र पर अपना-अपना मत प्रकट कर रहे हैं। लखनपुर बनारस नगर से बारह मील पर उत्तर की ओर एक बड़ा गाँव है। यहाँ अधिकांश कुर्मी और ठाकुरों की बस्ती है, दो-चार घर अन्य जातियों के भी है।' इस पूरे

विवेचन से स्पष्ट हो जाता है कि कथा लखनपुर की है। शाम के समय घरों में भोजन बनाने की प्रक्रिया प्रारम्भ हो गई है। गाँव के लोग पूरे दिन के कार्य से फारिग होकर अब हाकिमों के चरित्र की चर्चा में मशगूल है। यानी आगे क्या होने वाला है उसका भान पाठक को इस विवेचन से हो जाता है। इसी तरह लखनपुर के निवासियों की विपत्तियों का वर्णन भी प्रेमचंद ने सूचनात्मक रूप में किया है लेकिन उससे वहाँ के निवासियों के कष्टों का बड़ा ही स्वाभाविक और त्रासद रूप हमारे समक्ष उपस्थित होता है 'कितने ही घर प्लेग से उजड़ गये। कई घरों में आग लगी। कई चोरियाँ हुई। उन पर दैविक घटनायें अलग हुईं। कभी आँधी आती, कभी पानी बरसता। फाल्गुन महीने में एक दिन ओले पड़ गये। सारी खेती नष्ट हो गयीं।' इस विवरण में एक तरफ तो गाँववालों पर जमींदार का कोप और दूसरी तरफ उनके अपने कष्टों और व्यथा की चर्चा की गई है, जो पाठक के हृदय को अंदर तक आप्लावित कर देती है। ऐसी कठिन परिस्थितियों में ये किसान अपना जीवन बिताते हैं फिर भी हार नहीं मानते।

इसी तरह लेखक द्वारा पात्रों के चरित्रों की विशेषताओं की चर्चा और पात्रों की भाषा से भी हमें उस पात्र की विशिष्टता के बारे में जानकारी मिलती है। कहीं कहीं तो यह विवरण के रूप में है कहीं-कहीं संवाद में स्पष्ट होता है। ज्ञानशंकर और प्रभाशंकर की बातचीत के एक अंश को देखते हैं। ज्ञानशंकर एक ओर तो अपने चाचा को आतिथ्य-सत्कार और पालन के लिए धिक्कारते हैं और दूसरी ओर प्रेमचंद उनकी विशेषता का विवरण देते हुए लिखते हैं - 'ज्ञानशंकर ने नयी सभ्यता की जिन विशेषताओं का उल्लेख किया, उनका वह स्वयं व्यवहार न कर सकते थे। केवल उनमें मानसिक भक्ति रखते थे। प्राचीन-प्रथा को मिलाना उनकी सामर्थ्य से परे था। निन्दा और परिहास से सिद्धांत में चाहे न डरते हों, पर प्रत्यक्ष उसकी अवज्ञा न कर सकते थे।' आतिथ्य-सत्कार और कुटुम्ब-पालन को मन में चाहे अपव्यय समझते हों, पर उनके मित्रों तथा सम्बन्धियों को कभी उनकी असज्जनता की शिकायत नहीं हुई।' गायत्री, प्रेमशंकर, विद्या, ज्वालासिंह आदि के चरित्र के विशिष्ट पहलुओं की जानकारी भी हमें लेखक द्वारा दिए गए इन्हीं विवरणो के तहत मिलती है।

संवादों के अंतर्गत भी प्रेमचंद ने पात्रानुकूल भाषा का प्रयोग किया है। यहाँ ग्रामीण पात्र भी हैं, जमींदार भी, शहरी भी, अफसर वर्ग के भी। प्रेमाश्रम के ग्रामीण पात्रों का एक संवाद देखते हैं। बिलासी अपने मवेशियों को लेकर उस चरावर में आती है जहाँ जमींदार ने मनाही कर रखी है। उन्हें देखकर बिन्दा और कर्तार का वार्तालाप है -

"बिन्दा - **होबे करी** तो **कौनो** डर हौ? अब की **जस जर आवा** है कि **ठठरी होय गवा** है।

कर्तार - बड़े कस-बल का पट्ठा है। सुक्खू चौधरी का तालाब जहाँ बन रहा था। वहीं एक दिन अखाड़े में उससे मेरी पकड़ हो गयी थी। मैं उसे पहले ही झपाटे में नीचे लाया, लेकिन ऐसा तड़प के नीचे से निकला कि मैं झोंके में आ गया। सँभल ही न सका। बदन नहीं लोहा है।

बिन्दा - निगाह का बड़ा सच्चा जवान है। क्या मजाल कि कोऊ की बिटिया-**मेहरिया** को ओर आँख उठा के **ताके**।

कर्तार - वह देखो फैजू और और गौस खाँ भी उधर ही आ रहे है। आज **कुसल** नहीं दीखती।

बिन्दा - यह गाये - भैसें तो मनोहर की **जान परत** हैं। बिलासी **लीने आवत** हैं।'

इस उपन्यास का परिवेश लखनपुर है। अतः वहाँ के निवासी भी स्थानीय भाषा का प्रयोग करते हैं। इसी भाषा का व्यवहार यहाँ प्रेमचंद ने दिखाया है। अगर उनके ग्रामीण किसान पात्र अवधी मिश्रित हिन्दी का प्रयोग करते है तो जमींदार और अफसर वर्ग की भाषा शहरी हिंदी है। एक उदाहरण देखते हैं -

'ज्वालासिंह - गवाह कमजोर थे। मुकदमा बिल्कुल बनावटी था।

ज्ञानशंकर - यहा सुनकर असीम आनन्द हुआ। आपको हजारों धन्यवाद। चचा साहेब तो खुशी से बावले हो जाएंगे।

ज्वालासिंह इस दबी चुटकी से पीड़ित होकर बोले-यह कानून की बात है। मैंने कोई अनुग्रह नहीं किया।'

ठेठ ग्रामीण पात्र और जमींदार वर्ग के पात्रों के संवाद के ये उदाहरण हमने आपको प्रेमचंद की भाषा के उतार चढ़ाव का संकेत देने के लिए प्रस्तुत किए हैं। यही नहीं जहाँ गौस खाँ, नूर आलम, फैजू और इर्फान खाँ आदि के संवाद है वहाँ भाषा बिल्कुल अलग, उर्दू से भरी हुई है-

'नूर आलम - तुम इस गुमान में होगे कि हाकिम को तुम्हारे बुढ़ापे पर तरस आ जायगी और वह तुमको बरी कर देगा। मगर इस धोखे में न रहना। वह हटकर रिपोर्ट लिखूँगा और ऐसी **मोतबिर शदाहत पेश** करूँगा कि कोई बैरिस्टर भी ज़बान न खोल सकेगा।'

आइए और एक और उदाहरण देखते हैं। यहाँ इर्फान अली, ज्वालासिंह, प्रेमशंकर ओर ईजादहुसैन का वर्तालाप है-

'ईजाद हुसैन - खुदा आपको सबाब अता करे। अगर इजाजत हो तो जनाब का नाम भी ट्रस्टियों में दाखिल कर लिया जाय।

प्रेमशंकर - मैं इस इज्जत के लायक नहीं हूँ।

ईजाद - नहीं जनाब, मेरी यह इल्तजा आपको कबूल करनी होगी। खुदा ने आपको एक दर्दमन्द दिल अता किया है। क्यों नहीं, आप लाला जटाशंकर मरहूम के **खलक** है, जिनकी गरीब परवरी से सारा शहर मालामाल होता था। यतीम आपको दुआएँ देंगे और अंजुमन हमेशा आपकी ममनून रहेगी।

इर्फान अली ने ज्वालासिंह से पूछा - आपका कयाम यहाँ कब तक रहेगा?

ज्वाला - कुछ अर्ज़ नहीं कर सकता। आया तो इस इरादे से हूँ कि बाबू प्रेमशंकर की गुलामी में जिन्दगी गुजार दूँ। मुज़ालमत से इस्तीफा देना तय कर चुका हूँ।'

इस अंश में चारों व्यक्ति उर्दू मिश्रित हिन्दी का ही व्यवहार कर रहे हैं। यहाँ प्रेमचंद ने भाषा को व्यक्ति विशेष की ज़बान न बनाकर पूरे वार्तालाप में उसे ढाल दिया है। कहीं भी यह हमें प्रेमशंकर या ज्वालासिंह के संवादों में अटपटा नहीं लगता। यही नहीं कादिर खाँ लखनपुर में गाँववालों से उसी भाषा में वार्तालाप करता है जो उस गाँव का प्रत्येक व्यक्ति सामान्य रूप से बोलचाल में अपनाता है। उर्दू के ठेठ शब्दों का प्रयोग नहीं करता अपितु स्थानीय भाषा के ही शब्दों का प्रयोग अधिक करता है। 'दुखरन बोले - आजकल रात को मटर में सियार और हिरन बड़ा उपद्रव मचाते हैं। जाड़े के मारे उठा नहीं जाता।''

प्रेमचंद ने प्रेमाश्रम से पहले किसान जमींदार संघर्ष पर कोई उपन्यास न लिखा था। इस उपन्यास में पहली बार किसानों के संघर्ष की गाथा कही गई। अंत में उनकी विजय भी दिखाई गई। शोषक वर्ग और किसानों के विरुद्ध गवाही देने वालों के हृदय-परिवर्तन भी हुए। जिस प्रकार इस उपन्यास का विषय नया था और एक विशिष्ट परिवेश को प्रस्तुत करना था तो प्रेमचंद के लिए आवश्यक था कि वे उन्हीं की भाषा में उन्हीं की बात कहें। इस प्रयास में प्रेमचंद पूरी तरह सफल रहे हैं।

10.6 सारांश

इस इकाई में हमने प्रेमाश्रम के औपन्यासिक शिल्प पर विचार किया। प्रेमाश्रम की कथा जमींदार - किसान संघर्ष पर आधारित है। यह कथा लखनपुर से शुरू होकर लखनऊ और गोरखपुर पहुँचती है तथा लखनपुर के उज्ज्वल भविष्य में आकर समाप्त हो जाती है। लखनपुर प्रेमचंद के स्वप्न का गाँव बन जाता है जहाँ किसान अपनी भूमि का स्वयं मालिक है। जमींदार का अत्याचार और शोषण अब उसे नहीं सहना है। यहाँ प्रेमचंद दिखाते हैं कि ऐसा होने से लखनपुर के किसान अत्यंत जागरूक हो गए है। अब उन्हें बोर्ड की मेम्बरी भी मिल गई है। वे अपनी प्रस्ताव बोर्ड में रखते हैं और वह पारित भी हो जाता है। यही नहीं खेती में भी सुधार हो गया है। अब सारी पैदावार किसान की है उसे लगान और महाजन की भेंट नहीं करना पड़ता। प्रेमचंद यहाँ यह रेखांकित करना चाहते हैं कि यदि किसान स्वयं अपनी भूमि का स्वामी हो जाय तो पैदावार भी अधिक होगी और अनेक स्तरों पर जागृति आएगी।

प्रेमाश्रम में जमींदार, वकील, किसान, अफसर आदि सभी वर्गों के पात्र हैं। इन सभी वर्ग के पात्रों का अपना अलग अलग विशिष्ट चरित्र उभरा है। जमींदार वर्ग के पात्रों में भी दो तरह के वर्ग के प्रतिनिधि हैं। एक वर्ग अंग्रेजी सरकार की बन्दोबस्ती व्यवस्था के तहत कार्य करता है और किसानों का शोषण करने के लिए हर तरह के हथकंडे अपनाता है। इस वर्ग के प्रतिनिधि ज्ञानशंकर, राय साहब और गायत्री हैं, जबकि दूसरा वर्ग अभी भी पुराने नियमों को मानता है और किसानों से उन्हें सहानुभूति है। यह इस वर्ग के प्रतिनिधि प्रेमशंकर, प्रभाशंकर और मायाशंकर हैं। ग्रामीणों में भी एक वर्ग पुराने विचारों वाले किसानों का है जो अन्याय को ईश्वर की देन मानकर और अपना भाग्य समझकर स्वीकार करते हैं और झेलते हैं इनमें कादिर मियाँ प्रमुख हैं जबकि दूसरा वर्ग नयी चेतना से प्रभावित है। वह पत्रों के द्वारा देश विदेश की जानकारी भी रखता है इस वर्ग में बलराज और मनोहर प्रमुख है। इस इकाई में हमने इन चरित्रों की विशेषताओं पर विस्तार से चर्चा की है। प्रेमाश्रम की भाषा भी पात्रानुकूल ही है। प्रेमचंद ने जहाँ ग्रामीण पात्रों के वार्तालाप दिए हैं वहाँ उनकी भाषा स्थानीय है, लेकिन पढ़े-लिखे उच्च वर्ग की भाषा उनसे बिल्कुल अलग है। उसमें देहातीपन नहीं है।
उपन्यास के परिवेश से ही उसकी भाषा का गठन होना स्वाभाविक है। यह उपन्यास 1918-19 के लगभग लिखा गया। इसकी कथा, लखनऊ, बनारस और गोरखपुर के आसपास घूमती है अतः वहाँ के कृषकों का वास्तविक जीवन, उनकी व्यथा, गीत, लावनी, ख्याल आदि भी उपन्यास में सजीव हो उठे हैं।

10.7 अभ्यास प्रश्न

1. 'प्रेमाश्रम' की भाषा पर लेख लिखिए।
2. मनोहर तथा बलराज के चरित्र की तुलना कीजिए।
3. इकाई 11 की सहायता लेते हुए प्रेमशंकर और ज्ञानशंकर के चरित्र की विशेषताएँ बताते हुए उनकी तुलना कीजिए।
4. विद्या, श्रद्धा और गायत्री की चारित्रिक विशेषताओं पर प्रकाश डालते हुए उनकी विशिष्टता को रेखांकित कीजिए।

इकाई 11 ज्ञानशंकर का चरित्र

इकाई की रूपरेखा

11.0 उद्देश्य

11.1 प्रस्तावना

11.2 ज्ञानशंकर के चरित्र-विधान में प्रेमचंद की दृष्टि

11.3 प्रमुख पारिवारिक सदस्यों के साथ ज्ञानशंकर का संबंध

11.3.1 ज्ञानशंकर और प्रेमशंकर

11.3.2 ज्ञानशंकर और प्रभाशंकर

11.3.3 ज्ञानशंकर और राय साहब कमलानंद

11.3.4 ज्ञानशंकर और गायत्री तथा विद्या

11.4 ज्ञान शंकर : एक जमींदार के रूप में

11.5 ज्ञान शंकर की चारित्रिक विशेषताएँ

11.6 ज्ञान शंकर की जीवन–दृष्टि

11.7 सारांश

11.8 अभ्यास प्रश्न

11.0 उद्देश्य

इस खंड की इकाई 10 में आपने एक उपन्यास के रूप में 'प्रेमाश्रम' का अध्ययन किया। वहाँ हमने 'प्रेमाश्रम' की पात्र-योजना पर भी चर्चा की है। इस इकाई में हम प्रेमाश्रम के प्रमुख पात्र 'ज्ञानशंकर' के चरित्र के विविध पहलुओं पर चर्चा करेंगे। इस इकाई को पढ़ने के बाद आप :

- ज्ञानशंकर की चरित्र रचना में प्रेमचंद की दृष्टि की पहचान कर सकेंगे;
- परिवार के विविध सदस्यों के साथ ज्ञानशंकर के संबंध का परिचय दे सकेंगे;
- लखनपुर के ग्राम समाज के साथ जमींदार ज्ञानशंकर के संबंधों की चर्चा कर सकेंगे;
- ज्ञानशंकर के चरित्र की विशेषताओं की जानकारी दे सकेंगे; और
- जीवन के प्रति ज्ञानशंकर के दृष्टिकोण की व्याख्या कर सकेंगे।

11.1 प्रस्तावना

'प्रेमाश्रम' के औपन्यासिक शिल्प के अन्तर्गत इकाई-10 में हमने प्रेमाश्रम की पात्र योजना एवं इनकी चारित्रिक विशेषताओं की चर्चा की। इस इकाई में हम 'प्रेमाश्रम' के प्रमुख पात्र तथा अपने वर्ग के प्रतिनिधि चरित्र 'ज्ञानशंकर' के चरित्र पर चर्चा करेंगे। 'प्रेमाश्रम' उपन्यास के नायकत्व के संबंध में समय-समय पर प्रश्नचिह्न लगता रहा है। सच है कि प्रेमाश्रम में कोई नायक या नायिका नहीं है। इसमें कुछ विशिष्ट चरित्र हैं जो अपने-अपने वर्गों का प्रतिनिधित्व करते हैं। ज्ञानशंकर का महत्व इस बात में है कि वे पूरे उपन्यास की कथा के प्राण हैं। इस संबंध में आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी का कहना है -'प्रभाशंकर को इस ग्रंथ से अगर निकाल दिया जाए तो मूल कथा बिना रीढ़ की हो जाएगी, जबकि ज्ञानशंकर को निकाल देने से वह निर्जीव हो जाएगी।' प्रेमचंद उपन्यास के प्रारंभ में ही ज्ञानशंकर की महत्वाकांक्षाओं की जानकारी देते हैं - 'वह अपने परिवार को फिर समृद्धि और सम्मान के शिखर पर ले जाना चाहते थे। घोड़े और फिटन की उन्हें बड़ी आकांक्षा थी।..... वह अपने दीवानखाने को नाना प्रकार की सामग्रियों से सजाना चाहते थे। ..... चैन से जीवन व्यतीत हो यही उनका ध्येय